

## संत कबीर : आत्मबोध, प्रेम और क्रांति के अमर गायक



मुकेश नायक

मधुरता और क्रांति की ज्वाला-तीनों का अद्भुत संगम दिखाई देता है।

कबीर का व्यक्तित्व अलमस्त फक्कड़ का था-वे किसी परंपरा या बंधन में नहीं बंधे। उनकी साधकों, सबद और पद सीधे हृदय को स्पर्श करते हैं और साधक के भीतर एक अद्भुत खुमारी उत्पन्न कर देते हैं। उनकी वाणी आत्मा की उस प्यास को जगाती है, जो मनुष्य को अपने भीतर छिपे परम सत्य को खोज के लिए प्रेरित करती है।

ओशो रजनीश ने भी कबीर को संतों में सर्वोच्च स्थान दिया है। उनके अनुसार, कबीर पूर्णमा के चाँद के समान हैं- अद्वितीय और अनुलनीय। यह कथन कबीर की उस विलक्षणता को दर्शाता है, जो उन्हें अन्य संतों से अलग बनाती है। कबीर की वाणी केवल कविता नहीं, बल्कि एक जीवंत अनुभूति है- एक ऐसा संगीत, जो शून्य में भी गूँजता है और जीवन को महोत्सव बना देता है।

कबीर का सबसे बड़ा योगदान यह है कि उन्होंने ईश्वर को बाहरी आडंबरों से मुक्त कर दिया। उन्होंने स्पष्ट कहा-

**'कस्तुरी कुंडल बसै, मृग दूँदे बन माहि'**

अर्थात् जिस परमात्मा को मनुष्य बाहर खोजता है, वह उसके भीतर ही विद्यमान है। यह विचार न केवल सरल है, बल्कि अत्यंत गहन भी है। इसी प्रकार कबीर का यह

संदेश-

**'घर-घर दीपक बरै, लखै नहीं अंधरे.'**

मनुष्य को जागरूकता (साक्षीभाव) की ओर ले जाता है। यही बात गौतम बुद्ध की विपश्यना साधना में भी दिखाई देती है।

कबीर का दर्शन केवल जान तक सीमित नहीं है, उसमें प्रेम की सरस धारा भी प्रवाहित होती है। वे कहते हैं-

**'प्रेम गली अति सांकरि, तारि दो न समाय.'**

यहाँ अहंकार के पूर्ण त्याग की बात कही गई है। कबीर का प्रेम निःस्वार्थ, निर्मल और अद्वैत की अनुभूति से भरा हुआ है। उनके काव्य में जहाँ प्रेम का फाग है, वहीं क्रांति की आग भी है-

**'कबीरा खड़ा बाजार में, लिये लुकाठी हाथ.'**

यह पंक्ति समाज की रूढ़ियों और

अंधविश्वासों को जलाने का आह्वान है। कबीर केवल उपदेश नहीं देते, वे झकझोर कर जगाते हैं।

कबीर के काव्य में गुरु की महिमा भी अत्यंत महत्वपूर्ण है-

**'गुरु गोविन्द दोनों खड़े, काके लागू पाय.'**

यहाँ गुरु को ईश्वर से भी पहले स्थान दिया गया है, क्योंकि वही ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग दिखाते हैं। यह भाव भारतीय आध्यात्मिक परंपरा की गहराई को दर्शाता है। कबीर का जीवन भी उनकी वाणी की तरह सरल और निष्कलुष था। वे एक जुलाहे थे, लेकिन उनकी साधारण जीवनशैली के भीतर असाधारण आध्यात्मिक संपदा छिपी थी। उन्होंने अपने जीवन को 'झीनी-झीनी चदरिया की तरह निर्मल बनाए रखा।

अंततः, कबीर जान और भक्ति, निर्गुण और सर्गुण, शून्य और पूर्ण सभी का अद्वितीय संगम हैं। उनके वचनों में जो सत्य प्रकट होता है, वह केवल पढ़ने या सुनने के लिए नहीं, बल्कि जीने के लिए है।

इस प्रकार, संत कबीर केवल एक कवि या संत नहीं, बल्कि एक जीवंत चेतना हैं- एक ऐसा प्रकाश, जो आज भी साधकों के मार्ग को आलोकित कर रहा है। उनकी वाणी आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी उनके समय में थी। क्योंकि सत्य कभी पुराना नहीं होता।

(लेखक म.प्र. के पूर्व मंत्री हैं)

### क्लास by बड़े भाई

## जाको राखे साइयां मार सके ना कोय



संदीप द्विवेदी  
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

छोटे भाई, अभी कुछ ही दिन पहले मेरी, मेरे बड़े भाई सामान व्यक्तित्व से बात हुई उन्होंने किसी बात पर एक महाभारत से जुड़ा बहुत सुन्दर किस्सा सुनाया। उन्होंने बताया कि जब महाभारत युद्ध के लिए जब कुरुक्षेत्र चुन लिया गया तो उसकी तैयारियाँ शुरू हो गयीं। जगह साफ़ की जा रही थी, क्षेत्र के पेड़ पौधे काटे जा रहे थे। वहाँ पर उन्हीं काटे जाने वाले पेड़ों में से एक पेड़ की डाल पर एक चिड़िया, अपने नौनिहाल बच्चों के साथ घोंसला बनाकर रह रही थी। वो बेहद डर गयी। डर सही भी था उसका कि अब क्या होगा... फिर तभी वो पेड़ काट दिया गया। वो चिड़िया, उसके बच्चे और घोंसला सब नीचे गिर गए। वह अपने बच्चों को अपने पंखों की बाहों में समेटकर पूरी आस्था और विश्वास के साथ भगवान् से विनती करने लगी कि हे ईश्वर हमारी, हमारे बच्चों की रक्षा करो और तभी एक घटना और घट गयी। उसने उसी क्षेत्र में उसी कि ओर बढ़ता हाथी दिखा। उसके गले में एक बड़ी घंटी बंधी थी। अब चिड़िया को बचने की कोई सम्भावना नहीं थी। उस हठी के एक पैर से ही उसके पूरे परिवार के प्राण चले जाने थे, उसके बच्चे उड़ नहीं सकते थे, उसने उनका साथ नहीं छोड़ा और बच्चों को समेट आँख मूँदकर भगवान् को जपते वहाँ बैठ गयी। फिर अचानक उसके चारों ओर घनघोर अन्धेरा छा गया। वो कहीं पहुँच गयी उसको पता ही नहीं चल रहा था। लगभग 18 दिनों तक इसी अँधेरे में बच्चों के साथ वह चिड़िया उस घनघोर अँधेरे में बैठी रही। अठारहवें दिन अचानक उजाला हुआ और जो उसने देखा वह एक चमत्कार था। दरअसल अठारह दिन पहले उस युद्ध में आते हाथी के गले पर लटकी घंटी उस पर इस तरह गिरी थी कि वह चारों ओर से अपने परिवार के साथ ढक गयी। और इसी घंटी की वजह से अठारह दिनों के युद्ध में वह पूरी तरह सुरक्षित रही। इस घटना से एक बड़े चर्चित कहावत को बल मिला था कि जाको राखे साइयां, मार सके ना कोय।

छोटे भाई, कितना बढिया किसा है ना.. यह किस्सा और यह कहावत विश्वास और आस्था के चमत्कार का बेहद सुन्दर प्रमाण है। दृढ़ विश्वास और दृढ़ आस्था सदैव फलीभूत होती है। तो जैसी आस्था और विश्वास होगा वैसा ही परिणाम हमें मिलता रहता है। इस चर्चा से आपको क्या लेना है आप समझ गए होंगे. धन्यवाद

### कविता

## अरावली का सिकुड़ा आंचल



रतन कानावत

आसमान में उठते धुँएँ के छल्लेदार बादल आँखों की नमी को सोखती उमस शुष्क मुस्कान ओढ़े मासूम चेहरे धड़कनों को बढ़ाता हूटर

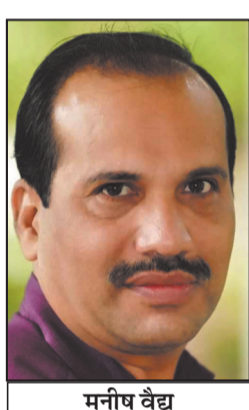
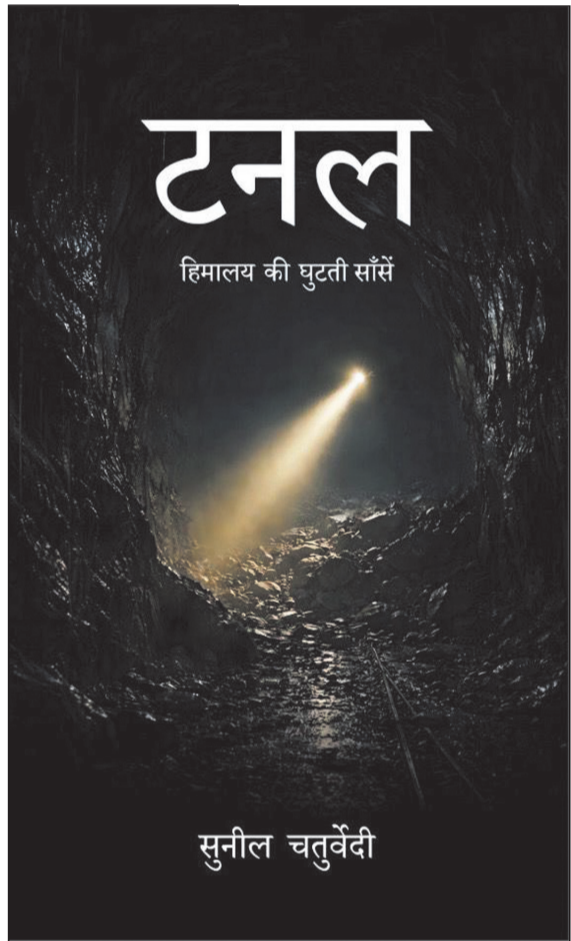
तभी आँखों के आगे लहराने लगता है अरावली का आंचल जिसकी ओट में यहाँ तक आई मैं सहसा सिमटता, सिकुड़ा महसूस होता है

और होने लगती हैं एक अजीब-सी बेचैनी, बेबसी और छटपटाहट जैसे ही रुकती है मेरी कार एक सीमेंट फैक्ट्री के दरवाजे पर .



### पुस्तक चर्चा

## हिमालय की घुटती साँसों को बचाने की ज़िद्द-ओ-जहद करता 'टनल'



मनीष वैद्य

हमारे देश के मुकुट कहे जाने वाले हिमालय की साँसें घुट रही हैं. वेंटिलेटर पर कराहते हिमालय की दर्द भोगी मद्धिम पुकार हम नहीं सुन पा रहे. नीति-नियमों, पर्यावरणीय रिपोर्ट्स और जानकारों की राय दफ्तारों में धूल खा रही हैं. लेकिन इससे उलट दिन-ब-दिन दरकने की तरफ बढ़ते जा रहे हिमालय को हमने अपनी नई जीवनशैली में मौज-मस्ती का नया टूरिस्ट स्पॉट बना लिया, नित नए खतरनाक निर्माण हो रहे, परम्परा से आई जीवनशैली और उसमें पहाड़ों से मनुष्य के बर्तव को हम सब पूरी तरह से भूल गए हैं. पहाड़ निजी हाथों को सौंपे जा रहे हैं. अब प्राथमिकताएँ अर्थ और सुविधाओं के नाम पर पीछे धकेली जा रही हैं.

इन विपरीत परिस्थितियों में हिमालय की आर्तनाद को हम तक पहुँचाता एक नया उपन्यास 'टनल' आया है, जो कुछ सालों पहले सिल्व्कारा में टनल हादसे की कथा के जरिए हिमालय की थकी हुई टेर सुनाता है. वागीश्वरी व रवीन्द्र कालिया सम्मान से सम्मानित उपन्यासकार सुनील चतुर्वेदी उन विषयों को गहराई से छूते हैं, जिन्हें समकालीन लेखक लगभग भूलते होते हैं. बाँते चारों उपन्यासों में उनके विषय वैविध्य देखे जा सकते हैं. यह उपन्यास इस लिहाज से और मानीखेज हो

जाता है कि इसके लेखक भूगर्भ वैज्ञानिक हैं, देशभर में अपने उल्लेखनीय पर्यावरणीय कार्यों के लिए खासे पहचाने जाते हैं.

यह उपन्यास उस एक टनल हादसे तक सीमित नहीं रहता बल्कि उसके पीछे की पड़ताल करते हुए बीते 75 सालों के उस पूरे संघर्ष और आंदोलनों को भी शिद्दत से याद करता है जिनमें यहाँ के सैकड़ों अनाम बलिदानों ने अपने हिमालय को बचाने की लड़ाइयों के लिए अपना सब कुछ वार दिया. अपने ही वोट से चुनी हुई सरकारों ने भले ही उनकी आवाजें नहीं सुनी हो या नकारखाने में गुम हो गई हों पर हिमालय के लोगों ने सब कुछ खोकर भी अपनी बात जिंदादिली से सामने रखी.

सहज-सरल ढंग से अपनी बात कहते हुए उपन्यास इस खानगी में आगे बढ़ता है कि एक बार शुरू करने वाला पाठक इसे पूरा करके ही दम लेता है. ग़ज़ब की किस्सागोई के साथ चित्रात्मक भाषा जगह-जगह दृश्य खड़े कर देती है. लोक को भी इसमें सजीव रूप में देखा जा सकता है. हिमालय का लोकपर्व फूलदेई हो या दीवाली पर भेला की परम्परा, इसमें उनके गीत हैं, उल्लाह है, आख्यान हैं, मान्यताएँ और कथाएँ हैं पर सब उपन्यास के कथानक में गूँथी हुई जैसे आप रजतपट पर कोई फिल्म देख रहे हों. प्रतिष्ठित संभावना प्रकाशन ने इसे सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रकाशित किया है. प्रतीकात्मक आवरण के साथ सुंदर, सादगीपूर्ण और साफ़-सुथरी छपाई किताब को पढ़ा ले जाने में मदद करती है. एक बानगी देखिए- 'उस रात चाँद आसमान में पूरा था. पहाड़ चाँद की रोशनी में भीगे खुश जान पड़ रहे थे. पेड़ गुनगुना रहे थे. हवा में संगीत था. खुशी का संगीत... अँधेरी बंद सुरंग सैकड़ों जलते दीयों से रोशन थी. कुछ मजदूर चीड़ के पेड़ों की छाल ले आए थे. उसकी मशाल बनाई गई और लोग मशाल हाथ में पकड़े,

ऊपर-नीचे घुमाते खुशी से किलकारियाँ भरते गोल घेरे में नाच रहे थे. में भी नाच रहा था.'

इसे कहने के लिए वे एक परम्परागत लेकिन उसमें भी नवाचार करते हुए अनुत्प शिल्प अपनाते हैं. कहानी का नैरेटर आखिर तक आते-आते खुद नायक लगने लगता है. सुनील जी की खासियत है कि वे अपने हर उपन्यास में कथानक के साथ शिल्प और भाषा दोनों बदल लेते हैं. यह काम बिरले लेखक ही कर पाते हैं. 'टनल' प्रकारांतर से हमारे हालिया समाज और समय की ऐसी अँधेरी सुरंग में बदल जाता है, जिसमें हम सब अपनी साँसें घुटने देने के लिए अभिशप्त हैं. यह सुरंग हमारे भीतर पैजंते जा रहे स्वार्थवृत्ति की हो या अपने परिवेश से कटकर रह जाने की, किताब में एक और सुरंग है, सत्ता और व्यवस्था की, जिसके पास इन ज़रूरी मुद्दों पर शिद्दत से सोचने तक की फुर्सत नहीं है. वे इसे बड़े कौरी तौर पर लेकर आसन्न संकट से तो बाहर आ जाते हैं लेकिन उनके पास आगे का कोई रोड मैप नहीं है. दुःख के साथ कहना पड़ता है कि अपनी बनाई इन सुरंगों में वही समाज फँसा है जो कल तक इन पहाड़ों को देवभूमि कहते हुए इनकी पूजा करता था. इनमें घूमने को तीर्थ मानता था पर आज तीर्थ जैसा कुछ नहीं बचा. पुरखों के तीर्थ अचानक हमारे लिए अब पर्यटन व्यवसाय बन गए हैं.

'टनल' अपने समय के बिगड़ते परिवेश की चिंता से उपजा है और इसे पढ़ते हुए पाठक अंत तक इस चिंता में शामिल हो जाता है.

टनल ( उपन्यास )

सुनील चतुर्वेदी

मूल्य-225 रुपाएँ

संभावना प्रकाशन, हापुड़

### कहानी



कमलेश व्यास 'कमल'

अगर किसी से पूछा जाए कि राजनीति क्या है? तो वह राजनीति विज्ञान में पढ़ी हुई कोई ना कोई परिभाषा सुना कर बता देगा कि राजनीति क्या है. परंतु बटेर बाबू का काम ऐसा नहीं है. उनसे अगर कोई बात पूछी जाए तो वे प्रैक्टिकली समझाना अधिक पसंद करते हैं. वैसे उनका तर्किया कलाम है- सब राजनीति है भिया! प्रत्येक घटना-दुर्घटना पर लंबी-चौड़ी बहस करने के बाद आप किताब भी नतीजा निकाल लें, बटेर बाबू आखिर में 'सब राजनीति है भिया!' कह कर अपना ठप्पा लगा ही देंगे!!

बटेर बाबू का असली नाम क्या है, यह तो उनका आधार कार्ड जाने या राशन कार्ड! शहर के लोग तो उन्हें बटेर बाबू के नाम से ही जानते हैं. किसी के यहां शुभ-अशुभ कोई भी कार्य हो, बटेर बाबू अगर उसे किसी भी एंगल से जानते हैं तो बगैर बुलाए हाज़िर हो जाएंगे और सिर्फ हाज़िर ही नहीं, पूरे मनोयोग से कार्य में हाथ भी बटाएंगे, आप कहें या ना कहें वे काम में ऐसे जुट जाएंगे जैसे सारी जवाबदारी आपने उन्हें ही सौंप रखी हो! इसीलिए शहर के लोग उन्हें उस वक्त बड़ी शिद्दत से याद करते हैं जब वे किसी कार्यक्रम में दिखाई ना दें.

शहर में कोई भी सार्वजनिक कार्यक्रम हो बटेर बाबू उस कार्यक्रम में ना होँ ऐसा हो नहीं सकता उनकी वेशभूषा, एक अदद कुर्ता पाजामा, गले में गमछा और पैरों में चप्पल. ठंड का मौसम हो तो जैकेट और शाल भी जोड़ लें. आर्थिक रूप से ठीक-ठाक बाप दादा की छोड़ी हुई दौलत और 20-25 किराएदारों वाली बड़ी सी चाल से आने वाला किराया भरण पोषण के लिए पर्याप्त है. शादी उन्होंने की नहीं, घरे में तीन भाई और उनके बच्चे हैं. बटेर बाबू कब सोते हैं कब जागते हैं यह एक पहली से कम नहीं, देर रात तक चलने वाले कवि सम्मेलन में भी वे दिखाई देंगे और अगली सुबह तरोताजा किसी प्रभात फेरी में भी उन्हें देखा जा सकता

## राजनीति की समझ

हैं! हंसमुख सदाबहार हर विषय में पारंगत बटेर बाबू जैसी शिख्यत दुर्लभ है! शहर के बड़े से बड़े रईस के बंगले से लेकर झोपड़पट्टी तक एक समान पकड़ रखने वाले अजुबा हैं वे!

प्रवचन के पंडाल में भी वे दिखाई देंगे तो देर रात किसी बार में मदिरापान करते हुए भी !! किसी दंगे किसी पंगे से वैसे तो वे दूर ही रहते हैं लेकिन किसी भी विषय पर बहस के दौरान उनका तर्किया कलाम 'सब राजनीति है भिया!' इसका कोई जवाब नहीं बटेर बाबू के पास एक, दो पहिया वाहन भी है जिसे उन्हें चलाते किसी ने नहीं देखा, जब भी देखा, उस वाहन पर पीछे बैठे ही देखा है. गाड़ी हमेशा उनके एक किराएदार का लड़का जिसे वे 'बारीक' कह के पुकारते हैं चलाता है. देखा जाए तो अधिकांश जगहों पर वे और बारीक साथ साथ ही दिखाई देते हैं.

एक दिन किसी बहस के दौरान जैसे ही बटेर बाबू ने अपना तर्किया कलाम 'सब राजनीति है भिया!' दोहराया तो बारीक पूछ बैठे 'भैया यह राजनीति क्या है?' सिर्फ पूछा होता तो कोई बात नहीं होती, पर... बारीक पता नहीं किस तरंग में था वह तो पीछे ही पड गया- 'बताओ ना भिया! ये राजनीति क्या है?'

बटेर बाबू ठहरे प्रैक्टिकल ईसान, उन्होंने भी तैश में आकर कह दिया 'कल तुझे बत्ताऊंगा कि राजनीति क्या है' इसके फौरन बाद पत्रकार वार्ता बुलाकर बटेर बाबू ने शहर के मध्य से कलाली हटाओ के मुद्दे पर एक दिन के अनशन की घोषणा कर दी. अगले दिन दोपहर तक कलाली के सामने बकायदा तंबू तान कर बटेर बाबू और बारीक

अनशन पर बैठ गए. बटेर बाबू की लोकप्रियता कोई कम न थी, पाँच-पचास फूल मालाएँ उनके गले में प्रशंसकों ने पहना दी और जोरदार तक्रारों भी हो गईं, शाम ढलते-ढलते कुछ

फुरसतिये, बटेर बाबू और बारीक

